विद्यालय, शिक्षक और समाज के संदर्भ में एन.सी.ई.आर.टी. के पचास वर्ष*

ए.के.शर्मा**
हिन्दी अनुवाद -ऋचा***

यह व्याख्यान एन.सी.ई.आर.टी. की स्वर्ण जयंती समारोह की भाषण माला की एक कड़ी है, जो स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में एन.सी.ई.आर.टी. की नेतृत्वकारी भूमिका और इसके उल्लेखनीय योगदान का संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत करता है। पिछले पचास वर्षों के दौरान एन.सी.ई.आर.टी. के 'महत्त्वपूर्ण कार्यों' और उपलब्धियों पर प्रकाश डालने के साथ ही यह व्याख्यान इस बात को भी सामने लाता है कि राज्य, विद्यालय, समुदाय और जनता की आशा-आकांक्षाओं को पूरा करने में वह किस तरह असमर्थ रही है। विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में एन.सी.ई.आर.टी. से अपेक्षाएँ इसकी काल्पनिक छवि के साथ इसकी अवचेतन इच्छा में समाहित हैं।

इस व्याख्यान का शीर्षक है ''विद्यालय, शिक्षक और समाज के संदर्भ में एन.सी.ई.आर.टी. के पचास वर्ष'' और यह किसी भी राष्ट्र के जीवन में विद्यालय, शिक्षक और समाज-इन तीन घटकों के अंत:संबंध अथवा सहजीवन पर पुनर्विचार करता है। स्कूली शिक्षा बच्चों के प्रारंभिक वर्षों के रचनात्मक विकास को परिभाषित करती है जिससे होकर वे जीवन के व्यावसायिक क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। व्याख्यान में सामाजिक असमानता को यथासंभव कम करने में विद्यालयी व्यवस्था के संदर्भ में पहुँच, साम्य तथा गुणवत्ता के सरोकारों और इन सरोकारों के बहुविध आयामों की चर्चा

* यह व्याख्यान एन.सी.ई.आर.टी. स्वर्ण जयंती भाषण माला के अंतर्गत डॉ. ए. के. शर्मा द्वारा 11जुलाई, 2011 को एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली में दिया गया।

** एन.सी.ई.आर.टी. के *भूतपूर्व निदेशक*

*** *शोध छात्रा,* सी.आई.ई., दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-7

की गई है। क्षेत्रीय और वैश्विक ज़रूरतों के लिए कुशल कार्यदल (Workforce) के निर्माण में, उच्चतर शिक्षा में अधिकाधिक छात्रों को प्रवेश दिलाने में, व्यक्तिगत तथा घरेलू जीवन में उत्पादकता को बढ़ाने में और देश के आर्थिक विकास में माध्यमिक शिक्षा की भूमिका पर भी विचार किया गया है।

माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता, शिक्षा के इस चरण में प्रदत्त पाठ्यवस्तु (कंटेंट) की गुणवत्ता पर निर्भर है और इस बात पर भी कि उसे किस तरह पढ़ाया जाता है और उसका मूल्यांकन किस तरह किया जाता है, साथ ही वह शिक्षकों की संप्रेषित करने की योग्यता पर भी निर्भर करती है। व्यावसायिक शिक्षा माध्यमिक शिक्षा का एक हिस्सा बनने में सफल नहीं हो सकी है। यह स्थिति तब तक बनी रहेगी जब तक कि इस संदर्भ में कोई भिन्न अथवा क्रांतिकारी विचार परिवर्तन नहीं किया जाता। माध्यमिक शिक्षा के प्रसार में कंप्लीमेंट्री (सहयोगी) विकल्प के रूप में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा की भूमिका पर भी विचार किया गया है। समाज के वंचित वर्गों की शिक्षा, लिंग-असमानता और शारीरिक एवं मानसिक रूप से विक्षिप्त बच्चों के लिए पाठ्यचर्या संबंधी चुनौतियाँ आदि के सरोकार भी स्कूली शिक्षा के लिए उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं।

सार्वजनिक परीक्षा को धीरे-धीरे समाप्त करने के संदर्भ में बोर्ड की नयी जिम्मेदारियाँ, ऐसे मुद्दे हैं जिन पर विश्वस्त चर्चा की ज़रूरत है।

आदर्श गुरु और प्रोफ़ेशनल टीचर में किस तरह सामंजस्य बैठाया जाय यह प्रश्न शिक्षक निर्माण के सभी प्रतिमानों पर फिर से गंभीर विचार करने की ज़रूरत पैदा करता है। शिक्षकों के लिए एक आलोचनात्मक प्रगतिशील आचार संहिता की ज़रूरत है ताकि वे छात्रों के भीतर जो भी सर्वोत्तम छुपा है, उसे विकसित करने, उसे बाहर लाने की कोशिश कर सकें; न कि केवल उसकी गलतियाँ गिनाने की। अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के बजाय शिक्षक को जनतांत्रिक व्यवहार करना चाहिए, जहाँ छात्र और शिक्षक सामूहिक रूप से नीतिगत कार्यप्रणाली (Ethical Modus Operandi) का निर्माण और निर्वाह करें। इस मानववादी अंतर्दृष्टि में एक सच्चा शिक्षित समुदाय पल्लवित, पुष्पित हो सकता है जो कि उस मार्केट मॉडल के विपरीत है जहाँ मानक और प्रतिस्पर्धा व्यक्ति को एक-दूसरे के विरुद्ध खड़ा कर देते हैं। शिक्षक शिक्षा के क्रांतिकारी रूपांतरण के लिए गंभीर प्रयास की फ़ौरी ज़रूरत है। स्कूल, शिक्षक और समाज का यह त्रिकोणीय निहितार्थ उन विविध मुद्दों का ढाँचा निर्मित करता है जो इस व्याख्यान में प्रस्तुत किए गए हैं।

मित्रों, मैं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् का आभारी हूँ जिसने मुझे एन.सी.ई.आर.टी. की स्वर्ण जयंती पर आयोजित भाषणमाला 2011 के अंतर्गत व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया है। मेरी समझ से यह भाषणमाला का तीसरा व्याख्यान है। मैंने इस

आमंत्रण को विनम्रता से स्वीकार किया है क्योंकि मैं इस बात के प्रति सचेत हूँ कि मैं शिक्षा क्षेत्र का केवल एक कार्यकर्ता भर हूँ, न कि कोई बड़ा विद्वान। शायद यह आमंत्रण मुझे इसलिए मिला है क्योंकि लगभग पच्चीस वर्षों तक मैं एन.सी.ई.आर.टी. परिवार का सदस्य रहा हूँ। इस व्याख्यान में मैं जो विचार व्यक्त करने जा रहा हूँ वह यहाँ के मेरे अनुभव और समझ पर आधारित हैं, जो देश के संदर्भ में सामान्य रूप से शिक्षा और विशेष रूप से स्कूली शिक्षा की स्थिति तक सीमित हैं। इस व्याख्यान का केंद्र बिंदु एन.सी.ई.आर.टी. की भूमिका है जो उसने प्रारंभ से अब तक निभाई है, और विद्यालय, शिक्षक तथा इनके सामाजिक प्रभाव से जुड़े वे सरोकार भी हैं जिनके प्रति यह संस्था जवाबदेह रही है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के जीवन में पचास वर्ष का समय एक सुदीर्घ काल है जिसमें इसकी उपलब्धियों का लेखा जोखा लिया जा सकता है; स्कूली शिक्षा के गुणात्मक विकास के लिए उसने जो नीतियाँ निर्धारित-प्रस्तावित की हैं उनका आकलन भी कर सकते हैं। इसलिए यह आत्मनिरीक्षण का भी समय है। इस आकलन-मूल्यांकन से उन लोगों को निश्चित रूप से गर्व की अनुभूति होगी जो लोग अतीत में इस संगठन के योगदान से जुड़े रहे हैं। यह उन कमियों और सीमाओं को पहचानने का भी अवसर प्रदान करेगा जिन्हें भविष्य में चुनौतियों के रूप में बदला जा सकता है।

एन.सी.ई.आर.टी. : अतीत, वर्तमान और भविष्य

इस तरह के अवसर पर कुछ संस्मरणों को भुला पाना कठिन है। एन.सी.ई.आर.टी. बुनियादी रूप से शिक्षा के क्षेत्र में, पेशेवरों की एक अकादमिक संस्था है जिसमें शोधार्थी और शिक्षक काम करते हैं। इसके मुख्य कार्यों में शामिल है 'सेवा, सुझाव, सहायता और विस्तार-प्रसार' जो इसके विवरण पत्र (Memorandum of Association, MOA) में दिए गए हैं। सरकारी विभागों की तरह एन.सी.ई.आर.टी. के पास कोई कार्यकारी (एक्ज़ीक्यूटिव) शक्ति नहीं है और न ही यह अनुदान बाँटने वाली कोई एजेंसी है। इसे व्यापक रूप से एक राष्ट्रीय संस्थान के रूप में जाना जाता है जो विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में नेतृत्वकारी भूमिका निभा रही है। एन.सी.ई.आर.टी. के जन्म और पचास वर्षों में इसकी भूमिका को इसी पृष्ठभूमि में समझा जा सकता है।

छठे दशक के उपरांत एन.सी.ई.आर.टी. का बहुविध विकास हुआ-अनुभव और विशेषज्ञता दोनों के मामलों में। शिक्षा के अनेक क्षेत्रों में इसने उल्लेखनीय योगदान किया; कभी-कभार वह अपने को पूरी तरह से तैयार नहीं कर पायी और कभी उसके पास पर्याप्त संसाधन भी नहीं थे। फिर भी, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इन वर्षों में उसे अच्छे कार्यों और उपलब्धियों के लिए पहचान मिली। इसके साथ ही वह राज्य, विद्यालय, समुदाय और जनता की आशा-आकांक्षाओं पर पूरी तरह से खरी नहीं

उतर सकी। यह स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण बदलाव लाने में एन.सी.ई.आर.टी. की नेतृत्वकारी भूमिका की अपेक्षा का संकेत है और ये अपेक्षाएँ न केवल एन.सी.ई.आर.टी. की काल्पनिक छवि को दर्शाती हैं बल्कि उसकी अवचेतन आकांक्षा को भी दर्शाती हैं। उसकी यह छवि उनके अकादमिक समुदाय के अथक एवं समर्पित प्रयासों से उभरी है और हमें निश्चय ही उन सभी पर गर्व है।

अपने पहले दशक में एन.सी.ई.आर.टी. ने स्वास्थ्य शिक्षा कार्य (HEW) से संबंधित परियोजनाओं पर महत्त्वपूर्ण काम किया। इस कार्य ने इसकी पहचान विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में एक प्रमुख शोध संगठन के रूप में स्थापित करने में मदद की। ढाई से छह वर्ष के बच्चों के विकासात्मक प्रतिमानों ने पूर्व विद्यालयी शिक्षा पर आगे कार्य करने की नींव रखी, जिसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में आरंभिक शैशवकालीन देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.)के रूप में पहली बार संदर्भित किया गया और अब संविधान के 45वें संशोधित अनुच्छेद में उसे शामिल किया गया है। चिल्ड्रेन मीडिया लेबोरेट्री (सी.एम.एल.) और पूर्व विद्यालयी शिक्षा पर विकासात्मक फ़ोकस करने की स्वीकृति ने आज आरंभिक शैशवकालीन देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) को आरंभिक शैशवकालीन देखभाल और विकास (ई.सी.सी.डी.) के रूप में ग्रहण करने की सोच को जगह दी है।

भारत सरकार द्वारा गठित शिक्षा आयोगों की सिफ़ारिशों को लागू करने में एन.सी.ई.आर.टी. हमेशा आगे रही है। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) की रिपोर्ट से क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों (आर.सी.ई.) का जन्म हुआ जिससे बहुउद्देश्यीय उच्च माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान के साथ प्रयोगशाला के रूप में एक बहुउद्देश्यीय निदर्शन विद्यालय (डी.एम. स्कूल) संलग्न हुआ और पहली बार अध्यापक शिक्षा में सामान्य और टेक्नोलॉजी, कृषि, वाणिज्य, गृह विज्ञान तथा फाइन आर्ट्स से संबंधित व्यावसायिक क्षेत्रों में विशिष्ट समन्वित कार्यक्रमों के विकास का प्रयास आरंभ हुआ। कुछ योजनाकर्ताओं की गहरी अंतर्दृष्टि के कारण ही एन.सी.ई.आर.टी. व्यावसायिक शिक्षा की ठोस परिकल्पना की नींव रखने में कामयाब हुई।

शिक्षा आयोग (1964–66) की मुख्य सिफ़ारिशों के बाद प्रथम पाठ्यचर्याओं की रूपरेखा सामने आई जिसे हम 'करीक्यूलम फॉर टेन इयर स्कूल' (1975) और 'उच्च माध्यमिक शिक्षा और इसका व्यावसायीकरण' (1976) के नाम से जानते हैं। इसके उपरांत एन.सी.टी.ई. (जो उस समय एन.सी.ई.आर.टी. का अभिन्न अंग थी) ने 'क्लासिक टीचर एजुकेशन करीक्यूलम – ए फ्रेमवर्क' का निर्माण किया। इन ऐतिहासिक दस्तावेज़ों ने पाठ्यचर्या में मुख्य नीतिगत सुधार किए जो आगे की पाठ्यचर्या रूपरेखाओं के लिए किए गए प्रयासों की जीवनरेखा बन गए जैसे कि 1988, 2000, 2005 में विद्यालयी शिक्षा के लिए तैयार की गई पाठ्यचर्या की रूपरेखाएँ और 'क्वालिटी टीचर एजुकेशन फ्रेमवर्क'(1988) और 'नेशनल करीक्यूलम फ्रेमवर्क फॉर टीचर एजुकेशन'

(2009)जो कि वैधानिक (Statutory) एन. सी.टी.ई. द्वारा बनाया गया।

एन.सी.ई.आर.टी. ने 1965 में 'प्रतिभा खोज' का एक अग्रगामी (Pioneer) कार्यक्रम चलाया। यह देश में ऐसे प्रतिभाशाली युवाओं की खोज की पहचान का पहला प्रयास था जो बुनियादी विज्ञानों और गणित में शिक्षा प्राप्त करके आगे चलकर इंजीनियरिंग और टेक्नोलॉजी में विकास की नींव रख सके। 'विज्ञान प्रतिभा खोज परीक्षा' की रूपरेखा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं की रूपरेखा की जनक बन गई।

सातवें दशक के प्रारंभ में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में तकनीकी (Technology) के इस्तेमाल का प्रथम प्रयत्न करने का श्रेय सेटेलाइट इंसट्रक्शनल टेलीविज़न एक्सपेरीमेंट (SITE) को जाता है, और इसकी पाठ्यवस्तु और प्रक्रिया को निर्धारित करने में एन.सी.ई.आर.टी. के शैक्षिक टेक्नोलॉजी केंद्र (सी.ई.टी.) की भूमिका प्रमुख थी। इसी भूमिका पर आगे चलकर केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान (सी.आई.ई.टी.)का निर्माण हुआ।

एन.सी.ई.आर.टी. को इस बात के लिए भी श्रेय दिया जा सकता है कि वह पहली संस्था है, जिसने जनगणना आधारित अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षणों(AIESs) का संस्थानीकरण करते हुए शिक्षा तंत्र को एक डाटाबेस प्रदान किया ताकि नीति निर्माण में मदद मिल सके। योजना आयोग के आदेश से डाटा बेस बनाते हुए आज हम आठवाँ अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण पूरा करने की ओर उन्मुख हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने अध्यापक शिक्षा में संपूर्ण बदलाव की सिफ़ारिश की थी जिसके परिणामस्वरूप अध्यापक शिक्षा को पुनर्गठित तथा पुनर्निमित करने की परियोजना का विकास हुआ। एन.सी.ई.आर.टी. और न्यूपा के ज़रिए 'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' (DIETs), 'शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय' (CTEs) और 'उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान' (IASEs) के अवधारणात्मक दस्तावेज़ों का विकास हुआ।

पहली कक्षा से लेकर बारहवीं कक्षा तक संपूर्ण विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रमों के क्षेत्र में पाठ्यपुस्तकों के निर्माण में एन.सी.ई. आर.टी. का योगदान सर्वविदित है। इन पाठ्यपुस्तकों में पाठ्यवस्तु की गुणवत्ता एवं उसके अनुकूल शिक्षाशास्त्र की जानकारी ने एन.सी.ई.आर.टी. को बहुत ख्याति दिलाई है। पाठ्यपुस्तक निर्माण की इस पूरी प्रौद्योगिकी, जिसने एन.सी.ई.आर.टी. को एक बड़ा नाम दिलाया है, की विभिन्न प्रक्रियाओं के दस्तावेज़ीकरण किए जाने की ज़रूरत है। ताकि प्रत्येक राज्य में राष्ट्रीय स्तर की प्रतिभा का विकास हो सके जो अपने क्षेत्रीय संदर्भों को ध्यान में रखते हुए, क्षेत्रीय विशेषज्ञों की भागीदारी से समान गुणवत्तापूर्ण पाठ्य-सामग्री डिज़ाइन कर सके।

ऊपर बताए गए उद्धरण उन महत्त्वपूर्ण पहलों की केवल एक झलक है जिनकी शुरुआत करने का श्रेय एन.सी.ई.आर.टी. को जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में एन.सी.ई.आर.टी. ने जो महत्त्वपूर्ण बहुविध भूमिका निभाई है उसे आगे बढ़ाने की ज़रूरत है, अपनी सोच को आगे

बढ़ाने और भविष्य में झाँकने की ज़रूरत है। उसे पिछले कार्यों से संतुष्ट होकर बैठ जाना नहीं है, उसे न केवल अतीत से पूर्वाग्रह रखना है और न ही केवल वर्तमान समय में शिक्षा जगत की अनगिनत व जटिल समस्याओं का विश्लेषण और समाधान निकालने में लगे रहना है। उसे एक राष्ट्रीय 'थिंक टैंक' की अपनी भूमिका का नवीकरण करने के सामर्थ्य को और बढ़ाना है क्योंकि इसी भूमिका के आधार पर वह केंद्र एवं राज्य सरकारों को नीति एवं कार्यक्रमों के निर्धारण में 'सलाह एवं सहायता' प्रदान करने में समर्थ हो सकती है। गुणवत्तापूर्ण शैक्षणिक विकास के समक्ष आज जो भी प्रश्न, समस्याएँ एवं मुद्दे हैं उन पर एन.सी.ई.आर.टी. को उद्देश्यपरक बहस एवं परिचर्चा आयोजित करने की संस्कृति को और अधिक उत्साह के साथ आगे बढ़ाने के लिए हमेशा सचेत रहना चाहिए। उसे यह भी ध्यान रखना होगा कि वह किस तरह राज्यों को गंभीर और वास्तविक शैक्षिक शोध करने वाले संस्थान बनाने में मदद कर सकती है। ऐसा करने से राज्य स्तरीय शिक्षा संस्थानों का विकास तेज गति से हो सकेगा। इसलिए इस समय एन.सी.ई.आर.टी. को आत्मनिरीक्षण करने की भी आवश्यकता है कि उसके प्रयास सही दिशा में जा रहे हैं या नहीं। और यदि परिस्थितियाँ माँग करती हैं तो प्रयासों में आवश्यक सुधार या फ़ेर बदल किया जा सके। जो भी हो, कुछ कार्य एन.सी.ई.आर.टी. ने अपने हाथ में ऐसे भी लिए या उसे सौंपे गए जो इसकी प्रशिक्षण एवं शोध परक भूमिका से सीधे-सीधे जुड़े नहीं थे और जिन्हें पूरा करने में समय और शक्ति की बर्बादी भी हुई और साथ ही उनसे एन.सी.ई.आर.टी. के बुनियादी कार्यों में विशेष योगदान भी नहीं हो सका। वैश्विक शैक्षणिक परिदृश्य में निरंतर बदलाव हो रहा है; और भारत इसका अपवाद नहीं है। विद्यालयी शिक्षा के इस बदलते परिवेश के प्रति जागरूक रहने और अपनी भूमिका का समुचित निर्वाह करने में अपने आपको सक्षम बनाने के लिए एन.सी.ई.आर.टी को शैक्षिक समस्याओं का हल खोजने के अपने तरीकों में निरंतर बदलाव लाते रहना होगा।

आगे बढ़ने से पहले मैं कुछ ऐसे सवालों की चर्चा करना चाहता हूँ जो एन.सी.ई.आर.टी. के संभावी भविष्योन्मुख सरोकारों के लिए प्रासंगिक हैं।

(i) एन.सी.ई.आर.टी. के एम.ओ.ए. (MOA) में लिखा है... ''शिक्षा, विशेषकर विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में ..., मंत्रालय को सहायता एवं सलाह देना।'' एन.सी.ई.आर.टी. को शिक्षा नीतियों और कार्यक्रमों को बनाने की प्रक्रिया में केंद्र व राज्य सरकारों को सलाह देनी चाहिए न कि केवल इनको लागू करने के संदर्भ में। इससे एन.सी.ई.आर.टी. की नेतृत्व क्षमता और मार्गदर्शक भूमिका उभरकर सामने आ सकती है और इसके कार्यक्रमों का फ़ोकस बढ़ सकता है ताकि नीति प्रतिपादन में उसकी

पहल उसकी कार्यनीति में अच्छी तरह समाहित हो जाए।

(ii) एन.सी.ई.आर.टी. कुछ संस्थानों का संयुक्त रूप है जिसमें आठ संघटक इकाईयाँ हैं। जो इस प्रकार हैं : राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (एन.आई.ई.), नयी दिल्ली, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान (आर.आई.ई.) जो अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर, मैसूर और शिलांग में स्थित है; केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान (सी. आई.ई.टी.) नयी दिल्ली और पंडित सुंदरलाल शर्मा केंद्रीय वोकेशनल शिक्षा संस्थान (पी.एस.एस.सी.आई.वी.ई.), भोपाल और (पहले कुछ फील्ड ऑफ़िस भी)। एन.आई.ई और एन.सी.ई.आर.टी. एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। जबकि प्रत्येक संघटक संस्थान स्वतंत्र रूप से एक पेशेवर व्यक्ति की अध्यक्षता में चल रहा है, तब एन.आई.ई. का अध्यक्ष कौन है? एन.सी. ई.आर.टी. को एक प्रशासनिक एवं नीति-निर्धारक सचिवालय के रूप में कार्य करना चाहिए जिसमें प्रत्येक संघटक संस्थान की एक अलग पहचान हो। एन.सी.ई.आर.टी. की मुख्यधारा से विभिन्न संघटकों के अलगाव को पाटना चाहिए।

(iii) एन.सी.ई.आर.टी. के संघटकों/विभागों में यथासंभव आंतरिक प्रतिनियुक्ति की एक प्रणाली विकसित की जा सकती है क्योंकि इससे संकाय के संसाधनों का संपूर्ण उपयोग शिक्षा के विभिन्न मुद्दों पर विशेषज्ञता की व्यापक परिधि प्रदान करने में हो सकता है।

(iv) एन.सी.ई.आर.टी. में अकादमिक ओहदे (पद) आवश्यक विशेषज्ञता के मुताबिक होने चाहिए। काउंसिल द्वारा किए जाने वाले अनुसंधान और विकास प्रशिक्षण तथा प्रसार कार्यों की विशेषताओं के संदर्भ में वर्तमान स्थिति की पुनः समीक्षा की ज़रूरत है।

(v) अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण की समय सीमा रेखा (Dateline) पंचवर्षीय योजना निर्धारण के अनुसार होनी चाहिए और योजना आयोग में उसका डाटा उपलब्ध होना चाहिए। नयी तकनीकी का उपयोग डाटा बेस के निर्माण में मदद कर सकता है ताकि समय पर उसे उपलब्ध कराया जा सके और योजनाओं में उसका इस्तेमाल किया जा सके।

(vi) प्रतिभा की खोज सही दिशा और सही तरीके से होनी चाहिए। जिससे कि प्रतिभाओं का वांछित पोषण हो सके (वास्तव में प्रतिभा पोषण की दिशा में अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है)। हम प्रतिभा की खोज के बुनियादी लक्ष्य से भटक गए हैं। शायद हम अन्य क्षेत्रों में भी वास्तविक प्रतिभाओं की खोज करना चाहते हैं। हमें प्रतिभा की पहचान और उसके पोषण के तरीके विकसित करने की ज़रूरत है।

(vii) वर्तमान समय में प्रौद्योगिकी के प्रयोग से शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में अनेक बदलाव आए हैं। इनकी मदद से पाठ्यचर्या विकास की प्रक्रिया को और सुदृढ़ बनाया जा सकता है। एन.सी.ई.आर.टी. को पाठ्यचर्या निर्माण और शैक्षिक तथा शिक्षाशास्त्रीय क्रियाकलापों के अभ्यासों के बीच अधिक सहक्रिया और सामंजस्य कायम करने की ज़रूरत है। विद्यालयी शिक्षा में यह सामंजस्य शिक्षाशास्त्रीय व्यवहार में पूरी तरह बदलाव ला सकता है। इस संदर्भ में सी.आई.ई.टी. की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। दूरदर्शन और आकाशवाणी के लिए उसे स्वतंत्र रूप से शैक्षिक कार्यक्रमों का निर्माण करना चाहिए। वहीं दूसरी ओर अन्य दृश्य-श्रव्य सामग्री के निर्माण के मामले में भी उसका प्रधान उद्देश्य एन.सी.ई.आर.टी. के क्रियाकलापों को समृद्ध करने का होना चाहिए और उसे विद्यालयी शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों में तकनीकी के इस्तेमाल को बढ़ावा देना चाहिए।

(viii) एन.आई.ई. परिसर में शिक्षण कार्यक्रमों की कमी है। यहाँ ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन (ज़रूरी नहीं कि वे कोई डिग्री देने के लिए आयोजित किए जाएँ) आगे आने वाले समय में विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में एन.सी.ई.आर.टी. के योगदान को और मज़बूत कर सकता है।

विद्यालयी शिक्षा का परिदृश्य

एन.सी.ई.आर.टी. के भावी सरोकारों के संदर्भ में इस समय विद्यालयी शिक्षा के परिदृश्य पर एक विहंगम दृष्टि डालना प्रासंगिक होगा। विद्यालयी शिक्षा उस प्रक्षेप-पथ को परिभाषित करती है जिसमें एक बच्चा अपने विकास के प्रारंभिक वर्षों से होकर अपने चुने हुए व्यावसायिक जीवन में प्रवेश करता है। विद्यालय मानव व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों की पहचान करके शिक्षा की पाठ्यवस्तु एवं प्रक्रिया के द्वारा उनका पोषण करता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के भावी जीवन के परिणाम इन्हीं आयामों पर निर्भर करते हैं। आवश्यकतानुसार विद्यालयों की उपलब्धता का प्रश्न, समाज के सभी वर्गों के लिए शिक्षा के समान अवसर प्रदान करना, स्कूलों में समुचित संसाधन का होना, प्रशिक्षित शिक्षक और प्रभावशाली शिक्षाशास्त्र का होना ताकि वांछित परिणाम मिल सकें आदि ऐसे सरोकार हैं जिनका ध्यान रखना प्रत्येक शिक्षा तंत्र के लिए अनिवार्य है। एन.सी.ई.आर.टी. से अपेक्षा की जाती है कि वह शोध और अन्य अध्ययनों के ज़रिये स्कूली तंत्र की ज़मीनी वास्तविकताओं को समझते हुए पहुँच, समानता और गुणवत्ता के मुद्दों को व्यावहारिक रूप से संबोधित करने का प्रयास करे। एन.सी.ई.आर.टी. एकमात्र ऐसी संस्था है जो बच्चे के विकास के सभी आयामों से संबंधित शैक्षिक सरोकारों को संबोधित करती है।

कुछ अन्य सरोकार भी हैं। भारत की विद्यालयी शिक्षा में पर्याप्त भेदभाव है। अमीरों और कुलीनों के बच्चे यहाँ अच्छी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर

सकते हैं, निजी और 'पब्लिक' स्कूलों में जा सकते हैं जबकि बहुसंख्यक गरीबों जिनमें अल्पसंख्यक एवं हाशिये के लोग भी शामिल हैं, के बच्चे उन सरकारी स्कूलों में जाते हैं जहाँ की शिक्षा की गुणवत्ता कमतर समझी जाती है। मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ कि पब्लिक स्कूलों में तथाकथित 'गुणवत्तापूर्ण शिक्षा' दी जाती है क्योंकि इस पक्ष पर वैज्ञानिक रूप से अध्ययन किए जाने की ज़रूरत है, लेकिन आम जन के दिमाग में यही बात बैठी है। इस प्रकार समाज का वर्ग-विभाजन विद्यालयी तंत्र में विभेद के रूप में प्रतिबिंबित होता है। सामाजिक असमानता को बनाये रखने और बढ़ाने में यह बहुत बड़ा कारक है। विद्यालयी शिक्षा में सुधार के लिए यह एक बहुत बड़ा सरोकार है जिस पर गंभीरता से ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत में शिक्षा से संबंधित एक अन्य व्यवस्थागत सरोकार (Systemic Concern) वैश्वीकरण और उदारीकरण से पैदा हुआ है जिसने विद्यालयी शिक्षा की बुनियादी प्रकृति एवं अर्थ को ही बदल डाला है। 'अंतर्राष्ट्रीय', 'वैश्विक' और 'विश्व' स्कूलों के पीछे जो दर्शन काम कर रहा है उस पर भी अध्ययन करने की ज़रूरत है। एन.सी.ई.आर.टी. इन मुद्दों पर गंभीर विमर्श चला सकती है।

जहाँ तक विद्यालयी सुविधाओं का सवाल है 'धनी' और 'निर्धन' के बीच की खाई को पाटा जाना चाहिए। किसी भी समाज के सामंजस्यपूर्ण विकास के सामाजिक फ़ायदे को ध्यान में रखते हुए विद्यालयी शिक्षा को भी समावेशी होना चाहिए। शैक्षिक बहिष्करण व्यक्ति को आजीविका, ज्ञान, सामाजिक प्रतिष्ठा, गरिमा आदि के बहिष्करण की ओर ले जाता है और वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता रहता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21-ए के अनुसार यह मानवीय अधिकारों का हनन है। इस समस्या पर विचार करने की ज़रूरत है और इस पर विमर्श चलाने में एन.सी.ई.आर.टी. नेतृत्वकारी भूमिका अदा कर सकती है। हमारे विद्यालयों में बहिष्करण के दो रूप मिलते हैं। पहला रूप सामाजिक बहिष्करण का है, जिसमें सामाजिक और आर्थिक रूप से दलित, पिछड़े वर्गों के बच्चे हैं जिसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक और अन्य वर्गों के बच्चे शामिल हैं। दूसरे प्रकार के बहिष्करण में विभिन्न प्रकार के विक्षिप्त बच्चे आते हैं। समतावादी समाज के निर्माण के लिए समावेशी शिक्षा की अत्यधिक आवश्यकता है। इस दिशा में प्रयत्न हुए हैं, यद्यपि वह पर्याप्त नहीं हैं, और उन्हें राइट ऑफ चिल्ड्रेन टू फ्री एण्ड कम्पलसरी एजुकेशन (RTE) एक्ट, 2009 नामक कानून में शामिल किया गया है जो कि एक स्वागतयोग्य कदम है।

आरटीई एक्ट इस बात के लिए सुरक्षा प्रदान करता है कि प्रत्येक बच्चे को गुणवत्तापूर्ण बुनियादी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। राज्य, शिक्षक, परिवार और समुदाय सबको एक साथ मिलकर इस उद्देश्य की पूर्ति में सहायक बनना है। दुनिया के कुछ देशों ने सभी बच्चों के लिए मुफ़्त और बालक-अनुकूल (Child Friendly) शिक्षा का प्रावधान किया है ताकि

सभी बच्चों का यथासंभव पूर्ण विकास हो सके। पिछले कुछ दशकों में भारतीय शिक्षा पद्धति का योगदान यह है कि स्कूलों में बच्चों, विशेषकर लड़कियों की संख्या तेज़ी से बढ़ी है। फिर भी असमानता अब भी बरकरार है क्योंकि बहुत सारे बच्चे अभी भी प्रारंभिक शिक्षा से वंचित हैं। एक आकलन के अनुसार भारत में अब भी 190 मिलियन बच्चों को गुणवत्तायुक्त तथा बाल-अनुकूल शिक्षा के प्रावधान के लिए और अधिक निवेश करने की ज़रूरत है। आरटीई (RTE) एक्ट वंचित समूहों जिनमें बाल मज़दूर, बाहरी देशों से आए बच्चे और ऐसे बच्चे जो सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, भाषायी तथा जेंडर या ऐसे अन्य कारणों की दृष्टि से पिछड़े हैं, उन तक पहुँचने का एक ठोस प्लेटफॉर्म प्रदान करता है। यह स्कूल मैनेजमेंट (विद्यालयी प्रशासन) से गुणवत्ता के साथ समानता मुहैया कराने की मांग करता है, उदाहरण के लिए शारीरिक दंड पर प्रतिबंध लगाकर क्लासरूम भय और चिंता से मुक्त कराना और जहाँ तक संभव हो सके मातृभाषा में शिक्षा देना। एन.सी.ई.आर.टी.द्वारा इन मुद्दों और सरोकारों को शोध एवं अन्य अध्ययनों के ढाँचे में डालकर इन पर गंभीरता से कार्य करने की ज़रूरत है। यह भी उल्लेखनीय है कि छः वर्ष की उम्र में शिक्षा की शुरुआत करने से विद्यालयी शिक्षा की तैयारी में विलम्ब हो सकता है। अतः पूर्व विद्यालयी शिक्षा में निवेश एक अच्छी रणनीति है। इसके अलावा विद्यालयों से बाहर के लाखों बच्चों को उनकी उम्र के अनुसार कक्षाओं में दाखिल करने और उन्हें विद्यालयों में बनाये रखने के लिए प्रयास करने की ज़रूरत है। यह अपने आप में एक बहुत बड़ी चुनौती है जो शैक्षिक प्रक्रिया में लचीलेपन और नवाचार की अपेक्षा करती है। सर्वशिक्षा अभियान की उपलब्धियों के आधार पर आरटीई एक्ट के साथ उसका सामंजस्य देश के सभी विद्यालयों में बनाना होगा। इस प्रकार सभी बच्चों के लिए प्रारंभिक शिक्षा के मिलेनियम डेवलपमेंट गोल (MDG) को प्राप्त करने में 2015 तक भारत को एक वैश्विक नेता के रूप में उभरना है। यह कार्य पूरा करना इतना आसान नहीं है। इस विषय पर एन.सी.ई.आर.टी. आगे भी विमर्श चलाती रहेगी।

बच्चे की (उम्र) परिभाषा और शिक्षा का अधिकार

शिक्षाशास्त्रियों तथा सिविल सोसायटी (Civil Society) ने यह चिंता व्यक्त की है कि आरटीई एक्ट में बालक की उम्र सीमा के प्रति न्याय नहीं किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 ए के तहत बच्चे (उम्र) को परिभाषित किया गया था। सरकार के इस निर्णय को संसद की स्वीकृति लेनी पड़ी। बुनियादी अनुच्छेद 45 तथा उन्नीकृष्णन फ़ैसले-दोनों में 0-6 वर्ष का आयु वर्ग शामिल है। द जुवेनिल जस्टिस एक्ट 18 वर्ष तक की उम्र के बच्चे को बच्चे के रूप में परिभाषित करता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के बच्चों के अधिकार के कन्वेंशन (UNCRC) में बच्चे की उम्र को

0–18 आयु वर्ग तक मान्यता दी गई है जिस पर भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं। सैद्धांतिक रूप में जुवेनिल जस्टिस एक्ट, यू.एन.सी.आर.सी. (UNCRC) तथा अनुच्छेद 21(जीवन का अधिकार) का हवाला देते हुए आरटीई एक्ट के तहत बच्चे की उम्र को 0–18 आयु वर्ग में परिभाषित किया जाना चाहिए था। परंतु मजबूरी बताते हुए यह एक्ट 6–14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों पर ही लागू होता है, जैसा कि अनुच्छेद 21ए में है। इस एक्ट में संशोधन करके इसे 0–18 वर्ष की उम्र सीमा तक लागू करने के लिए अधिकाधिक जन-समर्थन जुटाने की आवश्यकता है। यदि ऐसा हो सका तब न केवल ईसीसीई (ECCE) अपितु सेकेंडरी और हायर सेकेंडरी एजुकेशन भी यूनीवर्सल सेकेंडरी एजुकेशन के तहत शिक्षा के अधिकार अधिनियम के अंग के रूप में शामिल हो जाएँगे।

सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा की ओर

शिक्षा के अधिकार अधिनियम और सर्वशिक्षा अभियान को सफलतापूर्वक लागू करने से माध्यमिक शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ेगा-पहुँच, समानता तथा गुणवत्ता के मामले में। वर्तमान में सिर्फ़ पचास प्रतिशत बच्चे ही कक्षा नौ में प्रवेश कर पाते हैं। इस स्थिति से निपटने के लिए हमें आशावादी नज़रिया अपनाना चाहिए ताकि सौ प्रतिशत बच्चे माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच सकें। सामान्य शिक्षा की अवधारणा पर भी नए सिरे से विचार करने की ज़रूरत है। सामान्य शिक्षा की पाठ्यवस्तु को क्या हमें दसवीं कक्षा तक ही सीमित रखना चाहिए अथवा उसे बारहवीं कक्षा तक विस्तृत करना चाहिए। वैश्विक रूप से विद्यालयी शिक्षा 12 वर्षों की होती है। बच्चों का अधिकार 12 वर्ष की विद्यालयी शिक्षा तक बढ़ाने के लिए यह विचार करना होगा कि क्या यह मुफ़्त तथा अनिवार्य रूप से दी जाए। शुरुआत में वह मुफ़्त हो सकती है। क्या आरटीई एक्ट में निहित प्रावधान 12 वर्ष की शिक्षा के लिए भी उतने ही वैध हैं? कौन से प्रावधान वैध रहेंगे, कौन से नए प्रावधान जोड़े जाने चाहिए? इस विषय पर एन.सी.ई.आर.टी. एक भावी कानून की रूपरेखा बना सकती है।

प्रारंभिक शिक्षा के विपरीत माध्यमिक शिक्षा मानव-अधिकारों के सार्वभौम घोषणापत्र का हिस्सा नहीं थी। विश्व शिक्षा रिपोर्ट 2000 यह बताता है कि मानव अधिकारों की घोषणा को बनाते समय प्रारंभिक शिक्षा के बाद की शिक्षा का उल्लेख उच्च शिक्षा के रूप में किया गया है। माध्यमिक शिक्षा का प्रथम उल्लेख यूनाइटेड नेशंस कन्वेंशन अगेन्स्ट डिस्क्रिमिनेशन इन एजुकेशन (United Nations Convention against Discrimination in Education) में मिलता है- ''स्टेट पार्टियों को माध्यमिक शिक्षा को उसके विभिन्न रूपों में सामान्य रूप से सभी के लिए उपलब्ध कराना चाहिए''। यूएनसीआरसी (UNCRC) सामान्य और व्यावसायिक शिक्षा को भी इसमें शामिल करता है। माध्यमिक शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच के मामले में ये वक्तव्य वैश्विक नीति परिवर्तन के स्पष्ट संकेत देते हैं।

भारत सरकार ने राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA) के तहत माध्यमिक शिक्षा

के व्यापक उद्देश्य निर्धारित किए है जिसमें उसने प्रत्येक आबाद इलाके में 5 किलोमीटर की दूरी पर एक माध्यमिक स्कूल, 7–10 किलोमीटर की दूरी पर एक उच्चतर माध्यमिक स्कूल खोलने की योजना बनाई है, ताकि 2020 तक माध्यमिक शिक्षा की 'सार्वभौमिक पहुँच' तथा 'सार्वभौमिक ठहराव' संभव हो सके और माध्यमिक शिक्षा विशेष रूप से आर्थिक दृष्टि से कमज़ोर वर्गों तक पहुँच सके; इन कमजोर वर्गों में शैक्षिक रूप से पिछड़े, ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियाँ एवं विकलांग बच्चे तथा हाशिए के दलित, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों के बच्चे और शैक्षणिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों के बच्चे शामिल हैं। इस प्रकार यद्यपि माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने का कोई कानून नहीं बना लेकिन लक्ष्य पूर्ति की दिशा ज़रूर तय कर दी गई है।

एक परंपरागत तर्क कि 12 वर्षीय शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने में बहुत सारी समस्याएँ हैं क्योंकि आजादी के छः दशक बाद भी 8 वर्षीय सार्वभौमिक शिक्षा एक दिवास्वप्न बनी हुई है। यह समझने की ज़रूरत है कि यह एक ज़रूरी 'यूटोपिया' (Utopia) है और हमें राष्ट्रीय शक्ति और संसाधनों का उपयोग इस चुनौती से निपटने में अवश्य करना चाहिए न कि इससे भागकर राष्ट्र को संकट में डालना चाहिए। भारत सहित कोई भी देश, अलग-थलग भौगोलिक इकाई नहीं है; सभी एक वैश्विक ढाँचे में गुंथे हुए हैं। यह कोई वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा के चुनाव का प्रश्न नहीं है, यह एक ज़रूरत है जिसकी उपेक्षा करना राष्ट्र को संकट में डालना है। वैश्विक प्रतिस्पर्द्धात्मक मानव संसाधन के द्वारा ही हम उत्पादन, सेवा, व्यापार और शासन में वैश्विक प्रतिस्पर्द्धाओं से निपट सकते हैं; और माध्यमिक शिक्षा इन उद्देश्यों को पाने का आधार है। इन मुद्दों को सामने लाने की ज़रूरत है और इसमें संदेह नहीं कि एन.सी.ई.आर.टी. यह काम कर सकती है।

वैश्वीकरण के दबाव के अलावा, माध्यमिक शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच उपलब्ध कराना राज्य का भी कर्तव्य है। शिक्षा एक सामाजिक आकांक्षा है, जिसे गुणवत्तापूर्ण जीवन की सफलता का द्वार समझा जाता है। आनुभाविक प्रमाण शिक्षा और गुणवत्तापूर्ण जीवन के प्रत्यक्ष संबंध को दर्शाते हैं, मानव विकास की सूची (Human Development Index) इसे सत्यापित करती है। शिक्षा की पुरानी सामाजिक आकांक्षा अब एक नया मोड़ ले रही है। आज गरीब और कम पढ़े-लिखे माता-पिता अपने बच्चों को भी कुछ पढ़ाना-लिखाना चाह रहे हैं और शिक्षित मध्यवर्ग गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की इच्छा कर रहा है। प्राइवेट सेक्टर में ऊंचे शुल्क वाली माध्यमिक शिक्षा की प्रचुरता अच्छी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की प्राथमिकता का संकेत है और इसे सरकारी स्कूलों में प्रदान की जाने वाली गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के संदर्भ में जाँचा जाना चाहिए।

औपचारिक और वैकल्पिक शिक्षा के तरीकों के ज़रिए सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा को प्राप्त करने का जो लक्ष्य रखा गया है उसे भारत को सन् 2020 तक प्राप्त करने के प्रयास करने हैं।

इसे प्राप्त करने से पहले अनुमान है कि 2012 तक प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण का लक्ष्य प्राप्त कर लिया जायेगा। यह अनुमान भी है कि विद्यालयी शिक्षा की आंतरिक कुशलता में सौ प्रतिशत की वृद्धि होगी और 2012 के बाद कोई फेल नहीं होगा। तभी दाखिले का परिमाण किसी आयु वर्ग के वास्तविक आबादी के अनुकूल होगा। सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा (USE) को प्राप्त करने की यह रूपरेखा भारत सरकार की एसएसए (SSA) की रणनीति से मेल खाती है। यूईई (UEE) और यूएसई (USE) में आठ वर्षों का अंतर है जिससे (क) माध्यमिक स्तर पर सामर्थ्य निर्माण किया जा सके-माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान क्षमता न केवल अपर्याप्त है बल्कि गुणवत्तापूर्ण भी नहीं है और देश के विभिन्न क्षेत्रों में पहुँच के संदर्भ में असमान स्थिति में है; (ख) उपलब्ध आँकड़ों की तुलना में जनसंख्या बढ़ती वृद्धि दर को ध्यान में रखा जा सके; (ग) और यूईई को प्राप्त करने में कुछ छूट दी जा सके। विभिन्न अध्ययनों से यह संकेत मिलता है कि 2016 तक यूईई को प्राप्त करने का संभव परिदृश्य बनता है।

भारत सरकार माध्यमिक शिक्षा पर, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA) के तहत अधिक निवेश (52,000 करोड़ रुपये) करना चाहती है। उसने 6000 मॉडल स्कूल स्थापित करने का भी प्रस्ताव किया है। इनमें से 3500 मॉडल स्कूल केंद्रीय विद्यालयों के पैटर्न पर स्थापित होंगे और 2500 स्कूल पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (PPP) तरीके के होंगे। शिक्षा कर (एजुकेशन सेस) में तीन प्रतिशत की वृद्धि की गई है ताकि माध्यमिक और उच्च शिक्षा का विकास किया जा सके। माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिए हमें प्रारंभिक स्तर पर ट्रांज़िशन रेट (Transition Rate) बढ़ानी होगी तथा आस-पास के इलाकों में माध्यमिक शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध करानी होंगी। साथ ही हमें गुणवत्तापूर्ण माध्यमिक शिक्षा उचित मूल्य पर उपलब्ध करानी होगी। माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए वर्तमान संस्थानों को मजबूत बनाने के साथ-साथ नये संस्थान खोलने की भी ज़रूरत है। प्रारंभिक शिक्षा के विपरीत जहाँ शिक्षक-छात्र का अनुपात 1:40 है, यहाँ हमें भारी संख्या में विभिन्न विषयों के शिक्षकों की ज़रूरत होगी। कभी-कभार हमें केवल 10 छात्र पर एक शिक्षक भी रखना पड़ सकता है।

विद्यालयी शिक्षा : पाठ्यचर्या संदर्भ

वर्तमान पाठ्यक्रम की जड़ता को तोड़ने का क्या कोई रास्ता है? क्या सीखने के परिणामों पर ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि उसी से पाठ्यक्रम की पाठ्यवस्तु निकाली जा सके। क्या हमारा ध्यान जाँच-पड़ताल करने, प्रश्न उठाने, सृजनात्मकता, वस्तुपरकता, समस्या समाधान की योग्यता, निर्णय लेने वाले कौशल और सौंदर्य संवेदना का विकास करने वाली पाठ्यवस्तु की ओर होना चाहिए? इसी संदर्भ में सिमेस्टर प्रणाली को अधिक व्यावहारिक मायने दिए जाने की ज़रूरत है, न कि वर्ष में दो बार परीक्षाओं का आयोजन करना इसका लक्ष्य होना चाहिए।

छात्रों द्वारा पाठ्यक्रम विकल्पों के चुनाव में भी विषमता है। विज्ञान एवं गणित के दाखिलों में कमी हो रही है, समाज विज्ञानों तथा मानविकी में नामांकन बढ़ रहा है। उच्च शिक्षा पर इस असमानता का प्रभाव पड़ रहा है–सामान्य और विशिष्ट दोनों क्षेत्रों में। अगर माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर इस विषमता से नहीं निपटा गया तो उच्चतर शिक्षा पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

माध्यमिक शिक्षा में वस्तुत: नवीं कक्षा से लेकर बाहरवीं कक्षा तक की शिक्षा शामिल है। परंतु सुविधा के लिए ग्यारवीं और बाहरवीं कक्षा की पढ़ाई को उच्चतर माध्यमिक नाम दिया गया है। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा विद्यालयी तंत्र का एक निर्णायक और अंतिम चरण है। यह उच्चतर शिक्षा का द्वार है और शिक्षा को काम की दुनिया से जोड़ने वाली एक महत्त्वपूर्ण कड़ी। विकसित दुनिया एक ऐसे चरण में पहुँच चुकी है जहाँ 12वीं तक की स्कूली शिक्षा सार्वभौमिक बन गई है, वहीं भारत समेत विकासशील देशों में वह रूपांतरण के दौर से गुज़र रही है। भविष्य में देश की दीर्घकालीन सामाजिक और आर्थिक रणनीति के संदर्भ में उच्चतर माध्यमिक शिक्षा की भूमिका को पुन: परिभाषित करने की ज़रूरत होगी। इस चरण में आकर शिक्षा अकादमिक और व्यावसायिक (वोकेशनल) धाराओं में बँट जाती है। दोनों धाराओं की अलग-अलग विशेषताएँ हैं और उन्हें चलाने तथा प्रबंधन के लिए आवश्यक निवेश की प्रकृति भिन्न है। एन.सी.ई.आर.टी. ने 'कार्य और शिक्षा' पर फ़ोकस ग्रुप की रिपोर्ट तैयार की है परंतु मुझे यह कहने में संकोच हो रहा है कि पाठ्यक्रम पर उसके प्रभाव को ठीक से विश्लेषित नहीं किया गया है।

विद्यालयी पाठ्यक्रम : क्रियान्वयन पद्धति

माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता निश्चय ही शिक्षा के इस स्तर पर दी जाने वाली पाठ्यवस्तु की गुणवत्ता पर निर्भर करती है और इस बात पर भी कि उसे किस तरह पढ़ाया जाता है, तथा शिक्षक उसे बच्चों तक संप्रेषित करने में कितने समर्थ हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (NCF 2005) ने अधिगम के लिए रचनात्मकता को एक प्रमुख प्रतिमान बनाने की सिफ़ारिश की थी। इसका अर्थ यह है कि छात्र व्यक्तिगत और सहयोगी परिस्थितियों में अनुभव रूप में दी गई सामग्री/क्रियाओं के आधार पर विद्यमान विचारों से नये विचारों को जोड़ते हुए नये ज्ञान की सक्रिय रूप से रचना करते हैं। सक्रिय भागीदारी में जाँच-पड़ताल, खोज, प्रश्न-उत्तर, वाद-विवाद, प्रयोग और मनन करना शामिल है। ऐसा न हो कि यह सरोकार केवल दिखावा मात्र ही रह जाएँ। एन.सी.ई.आर.टी. को आगे आकर सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शिक्षाशास्त्रीय हस्तक्षेप विकसित करने के लिए काम करना चाहिए ताकि बच्चे और अध्यापक इस विचार को आत्मसात कर सकें और इसका महत्त्व समझ सकें।

रचनात्मकता का प्रतिमान कई तरह से स्वागत योग्य फीचर है क्योंकि वह :

1. बच्चे को शैक्षिक प्रक्रिया के केंद्र में रखता है,

2. अधिगम के अत्यंत जड़ पराजयवादी (Reductionistic) प्रतिमानों से दूर ले जाता है।
3. बच्चों द्वारा ज्ञान की रचना के एक महत्त्वपूर्ण तरीके के रूप में क्रियाकलापों एवं परीक्षणों पर बल देता है।
4. बच्चों की ज्ञान की अवधारणाओं का सम्मान करता है चाहे वे विभिन्न विषयों के आदर्श प्रतिमानों से कितने ही भिन्न क्यों न हों।
5. शिक्षक को वह एक संप्रेषक (ट्रांसमीटर) के रूप में नहीं बल्कि ज्ञान को सुगम बनाने वाले के रूप में देखता है।
6. वह ज्ञान के क्षेत्रीय संदर्भों का उपयोग करते हुए अवधारणाओं के निर्माण (कुछ सीमा तक) की ओर केंद्रित है।

'क्षेत्रीय' बनाम 'वैश्विक' ज्ञान को लेकर बहुत चर्चाएँ हुई हैं। अगर क्षेत्रीय ज्ञान का अर्थ बच्चों के वातावरण (जैसे कि आदिवासी समुदायों में पौधों के बारे में बच्चों का ज्ञान) अथवा क्षेत्रीय तकनीकी कौशल और अभ्यासों के संदर्भ में ग्रहण किया गया ज्ञान है तब वस्तुत: कोई मुद्दा नहीं है। लेकिन उसमें जब सभी प्रकार के क्षेत्रीय विश्वास और मिथक शामिल हो जाते हैं, यह समस्यात्मक बन जाता है। साथ ही रचनात्मकता का अर्थ भिन्न लोगों के लिए भिन्न हो सकता है। सामयिक बहस में इसे एक शिक्षाशास्त्रीय प्रतिमान माना जाता है और इसे इसी रूप में समझा जाना चाहिए। विशेष रूप से इसे यर्थाथवाद के समान नहीं समझा जाना चाहिए। इसका तात्पर्य है कि ज्ञान बुनियादी रूप से एक सामाजिक रचना है, क्या सही और क्या गलत इसे समझने की कोई निरपेक्ष कसौटी नहीं है।

विद्यालयी शिक्षा पाठ्यक्रम से संबंधित विभिन्न पहलू और मूल्यांकन अब शिक्षा के प्रारंभिक स्तर के लिए बनाये गए कानून आरटीई एक्ट का हिस्सा बन गए हैं। यद्यपि आरटीई एक्ट के अनुभाग 29(2) के प्रावधान स्कूली शिक्षा के सभी चरणों के लिए समान रूप से वैध (Valid) हैं, जैसे कि –

1. संविधान में निहित मूल्यों से अनुरूपता;
2. बच्चे का सर्वांगीण विकास;
3. बच्चे के ज्ञान, अंत:शक्ति और प्रतिभा का विकास;
4. शारीरिक एवं मानसिक योग्यताओं का यथा संभव संपूर्ण विकास;
5. बाल अनुकूल एवं बाल केंद्रित तरीके से क्रियाकलापों, खोज एवं छानबीन के ज़रिए अधिगम;
6. शिक्षा का माध्यम, जहाँ तक साध्य हो, बालक की मातृभाषा रखना;
7. बालक को डर, सदमे और चिंता से मुक्त रखना और उसे स्वतंत्र रूप से अपने विचार प्रकट करने में मदद करना;
8. बालक के ज्ञानबोध और उसे उपयोग करने की उसकी योग्यता का व्यापक एवं सतत् मूल्याकंन करना।

बच्चे के बुनियादी अधिकार के हिस्से के रूप में उपर्युक्त प्रावधानों को किस तरह न्यायोचित बनाया जा सकता है? हालांकि उक्त प्रावधानों के 'उल्लंघन' को सही-सही बताना मुश्किल है, फिर भी शिक्षक और विद्यालयों को बार-बार याद दिलाया जाना चाहिए कि वे उक्त प्रावधानों का ठीक से पालन करें और समुचित लक्ष्य तक पहुँचने का निरंतर प्रयत्न करें। उक्त प्रावधानों का ठीक से पालन करने के संदर्भ में सही निवेशों का विकास करना एन.सी.ई.आर.टी. के समक्ष एक चुनौती है।

शारीरिक तथा मानसिक रूप से चुनौतीपूर्ण विद्यार्थियों के लिए पाठ्यचर्या की चुनौतियाँ

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (NSSO) ने माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्कूलों में 9.66 करोड़ बच्चों के होने का अनुमान लगाया जबकि 1997-98 में सिर्फ़ 2.70 करोड़ बच्चों के दाखिले की सूचना मिली। यह संभावित आबादी का लगभग 25 प्रतिशत ही बनता है। सामान्य शिक्षा में इतने कम प्रतिशत बच्चों का होना एक गंभीर सवाल है। क्योंकि देश जनसंख्या विस्फोट को मानव-संसाधन में रूपांतरित करने की तैयारी कर रहा है। माध्यमिक स्तर पर बच्चों का ड्रॉपआउट भी शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ी क्षति है। जब सामान्य शिक्षा के विकास में कम बच्चों का प्रवेश तथा हाई ड्रॉपआउट रेट जैसी बड़ी बाधाएँ हों; तब विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में तो समस्याएँ और बढ़ जाती हैं। इस संदर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण कारकों की ओर ध्यान देने की ज़रूरत है, जैसे कि सामान्य शिक्षा को एक जन आंदोलन का रूप देना, विद्यालयी शिक्षा में पाठ्यचर्या अनुकूलन को अत्यावश्यक बनाना, विकलांगों के लिए शैक्षिक कार्यनीतियों का निर्माण, विक्षिप्त बच्चों की शिक्षा में सुधार के प्रयत्न करना क्योंकि उनकी शिक्षा सामान्य व्यक्तियों की तुलना में अधिक खर्चीली होती है; उन्हें समुचित वातावरण प्रदान करना क्योंकि फ़िलहाल देश में कुछ ही संस्थान ऐसे हैं जिन्होंने इस कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न किया है और सूचना तकनीकी को लागू करना, इत्यादि।

विद्यार्थी का मूल्यांकनः सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन पर ध्यान देना

विद्यालयी शिक्षा के बारे में बात करते समय स्कूल शिक्षा बोर्ड (विशेष रूप से माध्यमिक) के संदर्भ को अलग रखना असंभव है, जो माध्यमिक शिक्षा के लिए जन परीक्षा आयोजित करती है। एन.पी.ई (1986) ने मूल्यांकन सुधारों की जबर्दस्त वकालत की थी और एक मूल्यांकन फ्रेमवर्क बनाने का संकेत किया था। उसने अपने प्रोग्राम ऑफ एक्शन (POA) में जन परीक्षाओं को धीरे-धीरे समाप्त करने जैसे कई सुझाव दिए थे। उसने रटंत विद्या पर बल न देकर सतत् और व्यापक मूल्यांकन को अधिक महत्त्व देने की सिफ़ारिश की थी और सेमेस्टर पद्धति, ग्रेडिंग आदि लागू करने की बात की थी। ये सारे प्रावधान आरटीई एक्ट, 2009 के सेक्शन 29(2) में समाविष्ट हैं। परीक्षा सुधारों की प्रक्रिया को

आगे बढ़ाने के लिए व्यावसायिक हस्तक्षेप के तंत्र के ज़रिए कार्यनीति बनानी होगी क्योंकि हम यह अनुमान नहीं लगा सकते कि इस एक्ट में संशोधन करके कब तक इसमें 0–18 वर्ष की आयु सीमा के बच्चों को शामिल करके इसे माध्यमिक स्तर तक लागू किया जा सकेगा।

आमतौर पर यह एक गलत धारणा है कि परीक्षा के संचालन और प्रमाणपत्र देने की ज़िम्मेदारी शिक्षक और स्कूल को सौंपने पर स्टैंडर्ड गिर सकता है और शिक्षक के शिक्षण समय में कमी आ सकती है। यह सही तर्क नहीं है। एक मूलभूत सिद्धांत यह है कि जो शिक्षक शिक्षण में निपुण है, उसमें मूल्यांकन करने की सभी योग्यताएँ भी होती हैं और अपने विद्यालय के बच्चों को वह सही प्रमाणपत्र भी दे सकता है। स्पष्ट रूप से यह शिक्षक से एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी और जवाबदेही की अपेक्षा करता है और इसकी उपेक्षा कतई नहीं की जानी चाहिए। कदाचित इसमें अंतर विद्यालयी गुणवत्ता में सुधार लाने की क्षमता है जिसे उच्च व व्यावसायिक शिक्षा में दाखिले के लिए आयोजित की जाने वाली प्रवेश परीक्षाओं में विद्यार्थियों की उपलब्धि के ज़रिये परखा जा सकता है।

इसी से संबंधित एक सवाल अक्सर उठाया जाता है, वह यह कि जनपरीक्षाओं से अलग हटने पर स्कूल परीक्षा बोर्ड (माध्यमिक) की क्या नयी जिम्मेदारियाँ हो सकती हैं। इस बारे में मेरे दो सुझाव हैं जिन पर विशेषज्ञों की राय अपेक्षित है; बोर्ड ऐसे यंत्र और कार्यनीति का निर्माण कर सकते हैं जिनके द्वारा उनसे संबंधित विद्यालयों की उपलब्धि का अनुवीक्षण किया जा सके; शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए बोर्ड शिक्षकों की योग्यता को बढ़ाने के कार्यक्रम चला सकते हैं; देशभर के स्कूलों में प्रचलित पाठ्यपुस्तकों और अन्य निर्देशित सामग्री की गुणवत्ता पर पुनर्विचार के कार्यभार को लिया जा सकता है; जो लोग उच्च व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा संस्थान में प्रवेश पाना चाहते हैं उनके लिए आदर्श परीक्षाओं (Normanive Examinations) के संचालन का कार्यभार लिया जा सकता है।

माध्यमिक शिक्षा बरक्स व्यावसायिक शिक्षा

माध्यमिक शिक्षा तब तक संपूर्ण नहीं हो सकती जब तक कि व्यावसायिक शिक्षा को औपचारिक विद्यालय का अंग नहीं बनाया जाता। अकादमिक शिक्षा के लिए औपचारिक विद्यालय अधिक साधन-संपन्न और तत्पर होते हैं। किंतु उनके प्रशासनिक अधिकारी और अकादमिक संकाय के पास व्यावसायिक कार्यक्रमों को लागू करने वाला दर्शन नहीं होता। अगर व्यावसायिक शिक्षा को मौजूदा ढाँचे के साथ जोड़ना है तो औपचारिक विद्यालय की अवधारणा को रूपांतरित करना होगा। कुछ मूल सरोकार जो औपचारिक विद्यालय में व्यावसायिक कार्यक्रमों की सफलता को प्रभावित करते हैं, इस प्रकार हैं :

1. व्यावसायिक शिक्षा अकादमिक शिक्षा से हीन समझी जाती है।
2. विभिन्न व्यावसायिक कोर्सों के लिए व्यावसायिक संसाधनों की कमी है।

3. किसी भी क्षेत्रीय भाषा में शिक्षण अधिगम सामग्री नहीं है और यह व्यावसायिक कोर्स के बच्चों के लिए एक गंभीर समस्या है।
4. व्यावसायिक शिक्षकों के निर्माण के लिए कोई समुचित कार्यक्रम नहीं है। शिक्षा के परंपरागत महाविद्यालयों में न तो पर्याप्त संसाधन हैं और न ही व्यावसायिक शिक्षक निर्माण के कार्यक्रम के लिए शिक्षक प्रशिक्षक। इंजीनियरिंग, टेक्नोलॉजी, कृषि, स्वास्थ्य और पैरा मेडिकल कार्यक्रमों से जुड़े संस्थानों के मशवरे से एक डिज़ाइन तैयार करना होगा ताकि ये संस्थान न केवल व्यावसायिक शिक्षा के कोर्स तैयार करें बल्कि उसे चलाने में भी मदद करें।
5. सभी कार्यक्रमों को दो वर्षों की अवधि (11–12वीं) तक सीमित रख कर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा उन्हें प्रमाणित करने की जड़ता को तोड़ने की ज़रूरत है।

यह महसूस किया गया है कि जब तक इन मुद्दों की आलोचनात्मक जाँच–पड़ताल नहीं की जाती और स्थिति को सुधारने के लिए निर्णय नहीं लिए जाते तब तक औपचारिक विद्यालयों में व्यावसायिक कार्यक्रम फल–फूल नहीं सकते। जब तक उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र पर गंभीरता से पुनर्विचार नहीं होता तब तक स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहेगी।

विद्यालयी शिक्षा के संदर्भ में : मुक्त दूरस्थ शिक्षा

यद्यपि औपचारिक विद्यालयों पर यूईई (UEE) का लक्ष्य प्राप्त करने का दबाव रहता है माध्यमिक आयु वर्ग के काफ़ी ऐसे बच्चे हैं जो औपचारिक स्कूलों का लाभ नहीं उठा पाते। ओपेन एण्ड डिस्टेंस लर्निंग (ODL) पद्धति ऐसे लोगों की ज़रूरत और आकांक्षाओं को पूरा करने में मदद करती है जो अपनी अकादमिक और व्यावसायिक योग्यताओं को बढ़ाना चाहते हैं। आरटीई एक्ट का दिशा निर्देश है कि सभी बच्चे पहले आठ साल की शिक्षा केवल औपचारिक विद्यालयों के ज़रिए ही प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए ओ. डी. एल. (ODL) के प्रावधान महत्त्वपूर्ण हो उठते हैं। हमें ऐसे चरण तक पहुँचना है जहाँ औपचारिक और ओ. डी. एल. (ODl) पद्धतियों की सीमा रेखाएँ मिट जाएँ और दोनों एक दूसरे के सहयोगी बन जाएँ।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि यदि वे सभी निवेश जो आईसीटी (ICT) का प्रयोग करते हुए दूरस्थ शिक्षा को व्यापक और सक्रिय बनाते हैं, उनका कारगर प्रयोग पाठ्यचर्या विकास, अधिगम, शिक्षण और प्रशिक्षण से जुड़ी प्रक्रियाओं में नहीं किया गया तो यह औपचारिक और दूरस्थ दोनों प्रकार की शिक्षा के लिए लाभकारी नहीं होगा।

'गुरु' अथवा व्यावसायिक शिक्षक (?)

शिक्षा की सफलता बुनियादी रूप से इसे प्रदान करने की प्रक्रिया की गुणवत्ता पर निर्भर करती है

और इस दिशा में अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शिक्षक की भूमिका उन सब कारकों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है जो इस प्रक्रिया से जुड़े हैं। हमारे देश में शिक्षक की भूमिका की बहुत प्रशंसा की जाती रही है; राष्ट्रीय संदर्भों में किसी भी विषय पर चर्चा में गुरु के आदर्शों का उल्लेख किया जाता रहा है। जनतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के संदर्भ में गुरु की यह अवधारणा कितनी प्रासंगिक है? क्या 'प्रोफ़ेशनल टीचर' की अवधारणा प्राचीन 'गुरु' से किसी भी अर्थ में कमतर है? क्या दोनों को संबद्ध करके एक संश्लेषण (Synthesis) कायम हो सकता है।

कोई भी गुरु की अवधारणा को स्वप्निल, रहस्यात्मक तथा पुरातन समझकर फ़ौरन खारिज कर सकता है। एक विशेष सामाजिक-दार्शनिक संदर्भ में गुरु एक संस्थागत उत्तर था-मूलत: वह शिक्षा की एक मौखिक परंपरा थी, उस समय मानवीय शिक्षक के अलावा शिक्षा का कोई अन्य स्त्रोत नहीं था, और शिक्षा चुनिंदा विशिष्ट (इलीट) वर्ग तक सीमित थी। दूसरी तरफ़, हमारा युग एक ऐसा युग है जो शैक्षिक अवसरों की समानता के आदर्शों से निर्देशित है, जिसमें तकनीकी प्रधान अधिगम संसाधनों की बहुलता के ज़रिए हम जीवनपर्यंत शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। गुरु जिस आध्यात्मिक विवेक की शिक्षा देता था, उस पर भी हम ऊँगली उठा सकते हैं। शिक्षा तब व्यक्ति की आध्यात्मिक संतुष्टि एवं पूर्णता का माध्यम-भर था। उसके पीछे ऐसी ज्ञान-मीमांसा काम कर रही थी जिसके अनुसार आध्यात्मिक सत्य की प्राप्ति पुस्तकीय ज्ञान या आत्मविमर्श से न होकर विवेक से होती थी और जिसे दिव्य प्रेरणा प्राप्त गुरु ही दे सकता था। गुरु की ज़रूरत ऐसे विश्वासों की देन थी जिसमें मुक्ति सिर्फ़ गुरु कृपा से ही मिल सकती थी। इन आलोचनाओं के बावजूद आज के समय में गुरु के आदर्शों को एकदम से नकार देना उचित नहीं है क्योंकि उसे नकारना उस आदर्श में निहित सूक्ष्म सौंदर्यात्मक गुणों के प्रति असंवेदनशील होना है।

उपर्युक्त आमुख में हमारा सीधा सरोकार सामयिक संदर्भ में शिक्षक-निर्माण के तरीकों से है। हम जानते हैं कि गुरु ज्ञान प्रदान करने के प्रति पूर्णत: समर्पित होता था-विद्वान और चरित्र का धनी और जो समाज की सेवा किसी स्वार्थ या भौतिक उपलब्धि के लिए नहीं अपितु ज्ञान के लिए करता था। शिष्य को पढ़ाने में वह अपनी आध्यात्मिक उन्नति देखता था।

गुरु संस्थान से एक अन्य शिक्षा यह मिलती है कि गुरु को सम्मान और प्रतिष्ठा समुदाय की कृपा से नहीं अपितु अंतर्निहित गुणों के कारण मिलती थी। आधुनिक युग में यह सम्मान एक प्रभावी शिक्षक बनने के लिए आवश्यक व्यावसायिक कौशल और योग्यता को प्राप्त करने के ईमानदार एवं समर्पित प्रयत्नों से मिलता है। प्रत्येक शिक्षक से यह आशा की जाती है कि वह एक व्यक्ति और शिक्षक के रूप में बेहतर भूमिका का निर्वाह करे, चाहे वह किसी भी कारण से शिक्षण व्यवसाय में आया हो। इसलिए आदर्श गुरु बाहरी तौर पर कितना भी पुरातन

प्रतीत होता हो, इसकी बुनियादी चेतना में निम्नलिखित संदेश निहित है–**एक व्यक्ति और एक शिक्षक दोनों रूपों में निरंतर संघर्ष करना, छात्रों के विकास के प्रति प्रतिबद्धता, निरंतर सीखने के प्रति प्रतिबद्धता और सामाजिक सरोकार रखना।**

ये सार्वभौमिक सिद्धांत हैं जिन्हें देश-काल मिटा नहीं सकता और अच्छे कार्य करने के लिए हमें सदैव इनका ध्यान रखना चाहिए। ये सिद्धांत वर्तमान में चल रहे शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों के तरीकों में बदलाव लाने और उन्हें पुनर्जीवित करने की चुनौती हमारे सामने रखते हैं। ताकि हम ऐसे शिक्षक तैयार कर सकें जो उपरोक्त आदर्शों के करीब हों।

व्यावसायिक रूप से शिक्षक तैयार करने के बारे में कुछ प्रासंगिक सवाल हैं जिन पर चर्चा होनी चाहिए। क्या शिक्षक शिक्षा में ऐसे शिक्षक तैयार करने पर ज़ोर देना चाहिए जिन्हें स्कूली शिक्षा के सभी स्तरों की पूर्ण समझ हो और किसी एक स्तर पर कार्य करने की विशेषज्ञता हो? शिक्षक शिक्षा में सुधार लाने के लिए पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक तक सभी स्तरों के शिक्षक विश्वविद्यालयी व्यवस्था के अंतर्गत तैयार किए जाने चाहिए जिसकी सिफ़ारिश शिक्षा आयोग (1964-66)ने भी की थी लेकिन जिस पर अभी तक कोई ध्यान नहीं दिया गया। क्या शिक्षक तैयार करने में उच्चतर माध्यमिक स्तर को विशिष्ट स्तर समझना चाहिए अथवा उसे बी.एड. कार्यक्रम में ही सम्मिलित करना चाहिए? क्या व्यवस्था को सोच समझकर विषयवस्तु और शिक्षा शास्त्र का समन्वय करते हुए शिक्षक शिक्षा के एकीकृत कार्यक्रम शुरु करने चाहिए? क्या यह शैक्षिक रूप से सही है कि निम्न कक्षाओं में निम्न योग्यता प्राप्त शिक्षक ही पढ़ायें? क्या प्रक्रिया अपनायी जाए जिससे शिक्षक अपनी व्यावसायिक आचार संहिता का पालन कर सकें। बहुत सारे सवालों के बीच ये कुछ ऐसे सवाल हैं जो महत्त्वपूर्ण हैं और जो विद्यालयी शिक्षा और शिक्षा देने वाले शिक्षक की गुणवत्ता के लिए पुनर्विचार की मांग करते हैं।

निष्कर्ष

मित्रों, मैंने अपने सीमित अनुभवों के आधार पर विद्यालयी शिक्षा और शिक्षकों की शिक्षा के बारे में कुछ विचार व्यक्त किए हैं। मैंने अनेक मुद्दों को छूने की कोशिश की है, जिन पर आगे एन. सी.ई.आर.टी. में विमर्श करने की ज़रूरत है। विद्यालयी शिक्षा तथा शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में एन.सी.ई.आर.टी. के पचास वर्षों के संचित योगदान के आकलन से हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी। मैं इस अवसर पर एन.सी.ई.आर.टी. की सफलता की कामना करता हूँ और उन सबको धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिन्हें इस संस्था की सेवा करने का मौका मिला। एन.सी.ई.आर.टी. की क्षमता इसकी मूलभूत संरचना में अंतर्निहित है और अगर उसमें कुछ सुधार करना है, कुछ जोड़ना है तो हमें विद्वतापूर्ण विमर्श करना होगा। स्वर्ण जयंती का यह वर्ष इसी का अवसर प्रदान करता है और यह एक महत्त्वपूर्ण यादगार वर्ष बन सकता है।